



दैनिक भास्कर

Date: 31-05-16

अब मध्य एशिया तक हमारी पहुंच

यशवंत सिन्हा

चाबहार बंदरगाह के विकास के लिए भारत और ईरान के बीच हाल ही में समझौते पर हस्ताक्षर हुए। इससे व्यक्तिगत रूप से मुझे सही कदम उठाने का संतोष मिला है। मैं जब 2002 और 2004 के बीच विदेश मंत्री था तो मैंने इस मामले को आगे बढ़ाने में छोटी-सी भूमिका निभाई थी। असाधारण इतिहास बोध रखने वाले तब के प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी के मन में यह बात स्पष्ट थी कि भारत को ईरान के साथ श्रेष्ठतम संबंध विकसित करने चाहिए। वे 2001 में ईरान यात्रा पर गए, जिसने हमारे द्विपक्षीय संबंधों को जबर्दस्त बढ़ावा दिया। उन्हीं की यात्रा के दौरान ईरान और भारत अपने संबंधों को रणनीतिक स्तर तक ऊंचा उठाने पर सहमत हुए और द्विपक्षीय सहयोग के लिए कई सेक्टर की प्राथमिक क्षेत्रों के रूप में पहचान की गई।

ईरान के राष्ट्रपति खतामी 2003 की शुरुआत में भारत यात्रा पर आए। इसी यात्रा के दौरान दोनों देश औपचारिक रूप से चाबहार बंदरगाह को मिलकर विकसित करने पर सहमत हुए। 1990 के दशक में भारत ने ईरान के इस बंदरगाह का आंशिक विकास किया था और जब मैं विदेश मंत्री बना तो मैंने अपने तरीके से इसके पूर्ण विकास पर जोर दिया। तर्क बहुत सरल-सा था। पाकिस्तान हमेशा से भारत को उसके भू-भाग से अफगानिस्तान में प्रवेश देने के प्रति उदासीन रहा है। हाल के वर्षों में तो उसने भारत का अफगानिस्तान से ऐसा संपर्क बिल्कुल ही बंद कर दिया है। इस तरह पाकिस्तान ने न सिर्फ भारत के अफगानिस्तान जाने पर पाबंदी लगा दी, बल्कि इसने मध्य एशिया में भारत के प्रवेश को भी रोक दिया। भारत को नुकसान पहुंचाने के लिए पाकिस्तान ने अपनी भौगोलिक स्थिति का पूरी तरह इस्तेमाल किया है। हमें पाकिस्तान द्वारा खड़ी की गई इस बाधा का तत्काल कोई समाधान खोजना था। भारत के सामने सिर्फ ईरान का विकल्प था और चाबहार बंदरगाह का विकास एकमात्र संभावना।

चाबहार बंदरगाह ईरान के दक्षिण-पूर्वी हिस्से और ओमान की खाड़ी में स्थित है। यह ईरान का एकमात्र ऐसा बंदरगाह है, जिसकी समुद्र तक सीधी पहुंच है। ईरान की सीमा से अफगानिस्तान की हाईवे व्यवस्था तक भारत द्वारा जरांज-देलाराम हाईवे का निर्माण उल्लेखनीय उपलब्धि है, क्योंकि इसे बड़ी कीमत चुकाकर निर्मित किया गया है। आर्थिक रूप से तो भारत ने कीमत चुकाई ही, लेकिन आतंकी हमलों में भारतीय निर्माण दलों के लोगों की जानें भी गईं। पाकिस्तान ने इस हाईवे का निर्माण रोकने के लिए अपने सारे आतंकवादी गुटों का इस्तेमाल किया, लेकिन हम अविचलित रहकर निर्माण में लगे रहे।

जब ईरान ने चाबहार से जाहेदान को जोड़ने वाला रोड बनाया तो चाबहार और अफगानिस्तान और वहां से मध्य एशिया तक पूरा रोड नेटवर्क अस्तित्व में आ गया। वर्ष 2003 में भारत ने ईरान और अफगानिस्तान के साथ प्राथमिकता के आधार पर व्यापार के लिए त्रि-पक्षीय समझौता किया। प्रधानमंत्री की मौजूदा यात्रा के दौरान भारत, ईरान और अफगानिस्तान के बीच त्रिपक्षीय समझौते पर हस्ताक्षर को उचित ही गेमचेंजर की उपमा दी गई है। मध्य एशिया के लिए अंतरराष्ट्रीय उत्तर-दक्षिण परिवहन गलियारे के विकास से भारतीय सामान को बिना दिक्कत न सिर्फ अफगानिस्तान पहुंचाना आसान होगा बल्कि माल मध्य एशिया और उससे आगे यूरोप तक पहुंचाया जा सकेगा। तीनों ही देशों के लिए इस समझौते का अत्यधिक रणनीतिक महत्व है। कौन कहता है कि भूगोल बदला नहीं जा सकता और हमें इसमें हमेशा के लिए कैद रहना पड़ता है? यह गहरे खेद की बात है कि चाबहार पर अंतिम समझौते के लिए 13 साल का इंतजार करना पड़ा। इसका कारण अमेरिका से निपटने में यूपीए सरकार की भीरूता रही। अमेरिका ने ईरान पर इस बहाने प्रतिबंध लगा दिया कि वह परमाणु हथियार बनाने की टेक्नोलॉजी विकसित कर रहा है। इसके समर्थन में जो सबूत दिए गए थे, वे उतने ही बनावटी थे, जितने इराक द्वारा व्यापक विनाश के हथियार निर्मित करने के मामले में अमेरिका और ब्रिटेन द्वारा दिए गए सबूत, जिनका इस्तेमाल इराक पर हमला करने के लिए बहाने के लिए रूप में किया गया।

मुझे स्पष्ट रूप से याद है कि दिसंबर 2003 में मेरी ईरान यात्रा के दौरान राष्ट्रपति खतामी ने मुझे बताया था कि वे परमाणु हथियारों को इस्लाम विरोधी मानते हैं और उन्होंने आश्चर्य व्यक्त किया था कि परमाणु हथियार बनाने के लिए टेक्नोलॉजी विकसित करने में ईरान की कोई रुचि नहीं है। इसके बावजूद अमेरिका ने ईरान पर प्रतिबंध लगा दिए, जिसके तहत सभी देशों पर ईरान के साथ वाणिज्यिक सौदे करने पर रोक लगा दी गई। भारत ने न सिर्फ चुपचाप इसे स्वीकार कर लिया, बल्कि अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा आयोग की बैठक में ईरान के खिलाफ वोटिंग करने की हद तक चला गया। इस घटनाक्रम से मैं इतना विचलित हो गया था कि मैंने यूपीए सरकार के इस फैसले की कटु आलोचना करते हुए बयान जारी किया और कहा कि ईरान के खिलाफ वोट देकर हमें सच्चे अर्थों में अमेरिका के पिछलग्गू देश हो गए हैं। जैसा कि कई अन्य देशों ने किया था, हम भी मतदान से अनुपस्थित रह सकते थे।

ईरान और पश्चिमी शक्तियों के बीच लंबी समझौता वार्ताओं के बाद आखिरकार दोनों के बीच समझौता हुआ और अमेरिका ईरान पर लगे प्रतिबंध उठाने के लिए राजी हुआ। इससे भारत के लिए ईरान और इसके परे अपनी रणनीतिक योजनाओं को अमल में लाने का रास्ता खुल गया। ईरानी नेतृत्व की परिपक्वता और महानता को श्रेय देना होगा कि इसने अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी में उसके खिलाफ भारत के मतदान को इस ऐतिहासिक समझौते में बाधा नहीं बनने दिया। विदेश नीति का मूल उद्देश्य राष्ट्रीय हितों की रक्षा और उन्हें आगे बढ़ाना होता है। इस मूलभूत सिद्धांत का पालन दुनिया का हर देश करता है। इस मामले में भारत प्रायः गफलत करता रहा है। संदिग्ध कारणों से अपने राष्ट्रीय हितों की बलि चढ़ाने का हमारा लंबा इतिहास रहा है। दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी आबादी के साथ भारत एक बड़ा देश है और यहां लोकतंत्र की गौरवान्वित करने वाली लंबी परंपरा है। हमें अमेरिका सहित किसी भी देश के खेमे का पिछलग्गू देश बनने की जरूरत नहीं है। किसी के नेतृत्व में आने की बजाय हमें नेतृत्व देना चाहिए। हमें अपनी विदेश नीति को आकार देने की स्वतंत्रता की बेशकीमती विरासत की पूरी तरह रक्षा करनी चाहिए। मौजूदा सरकार द्वारा उठाए गए कुछ कदमों ने भी इस स्वतंत्रता के साथ समझौता किया है। हमें इस बारे में सावधान रहना होगा।

Date: 31-05-16

एनजीटी को सहयोग देने से ही बचेगा शहरों का पर्यावरण

गौर से देखा जाए तो पर्यावरणीय मामलों के लिए बनाई गई सुप्रीम कोर्ट की पीठ राष्ट्रीय हरित पंचायत(एनजीटी) और सरकारों व औद्योगिक ताकतों के बीच एक तरह का शीतयुद्ध चल रहा है। उसी संघर्ष के तहत एनजीटी ने सात राज्यों से उनके सबसे प्रदूषित शहरों की सूची एक दिन के भीतर मांगी है और उसे पेश न करने पर सरकार के विरुद्ध वारंट जारी करने की चेतावनी दी है। अब देखना है कि सरकारें उस आदेश का पालन करते हुए अपने शहरों के प्रदूषण का आंकड़ा पेश करती हैं या कोई नया बहाना बनाकर समय मांग लेती हैं। एनजीटी ने जबसे दिल्ली समेत देश के दूसरे नगरों में वायु प्रदूषण कम करने के लिए कदम उठाने शुरू किए हैं तब से डीजल गाड़ियों की लॉबी और उनके दबाव में काम करने वाली सरकारों के बीच हड़कंप मचा है। दिल्ली में डीजल गाड़ियों के पंजीयन पर रोक के खिलाफ अदालत में तो रियायत मांगते हुए आवेदन गए ही हैं साथ ही राजनीतिक स्तर पर भी लामबंदी तेज हो गई है।

उससे बड़ी विडंबना यह है कि राजधानी को प्रदूषण से बचाने के लिए माल से लदे हुए ट्रकों को रेलगाड़ी से शहर पार करने की व्यवस्था (रोरो सिस्टम) जैसे सुझाव भी परवान नहीं चढ़ रहे हैं। हालांकि, इस तरह की व्यवस्था कोकण रेलवे में सोलह साल से है, लेकिन दिल्ली के लिए रेल मंत्रालय ऐसा कुछ करने को तैयार नहीं है। इसी तरह देश के 11 बड़े शहरों में डीजल गाड़ियों पर पाबंदी के प्रस्ताव के विरुद्ध भारी उद्योग मंत्रालय ने एनजीटी में आवेदन प्रस्तुत किया है। एक प्रकार से यह जनता के स्वास्थ्य और उसके कारोबार के बीच अंतर्संघर्ष है, जिसमें दोनों तरफ के अपने तर्क हैं और बहुत आसानी से किसी को खारिज नहीं किया जा सकता। एक तरफ देश के पर्यावरण को बचाने और प्रदूषण को दूर करने का आदर्श है तो दूसरी तरफ कारोबार चलाने और रोजगार देने की जमीनी चुनौती है। विकास को रफ्तार देने के लिए संकल्प जताने वाली सरकारें जानती हैं कि तरक्की की कीमत पर्यावरण को उठानी पड़ती है, इसीलिए वे पर्यावरणीय नियमों के क्रियान्वयन में ढील देने की हिमायत करती हैं और उसके लिए अदालतों पर दबाव भी डालती हैं। हाल में राजधानी में यमुना की धारा के बीच हुए विश्व सांस्कृतिक महोत्सव पर एनजीटी का अपने आदेश से पीछे हटना इसका एक उदाहरण है। ऐसी स्थिति में इस बात की चौकसी होनी चाहिए कि एनजीटी जैसी शीर्ष संस्था का आदेश महज कागजी बनकर न रह जाए और उसे लागू करने में सरकारें पूरा सहयोग दें।



Date: 31-05-16

विधायिका की मर्यादा का हनन

आ. सुमित्रा महाजन जी, उत्तराखंड में पिछले दिनों तेजी से घटे राजनीतिक घटनाक्रम से आप अवगत ही हैं। उच्चतम न्यायालय द्वारा उत्तराखंड की हरीश रावत सरकार के विश्वास मत प्राप्त कर लेने की घोषणा एवं उसी क्रम में केंद्र सरकार द्वारा उत्तराखंड में राष्ट्रपति शासन हटाने के संबंध में लिए गए निर्णय के साथ ही पिछले दिनों उत्तराखंड में चल रही उथल-पुथल का पटाक्षेप हो गया। राजनीतिक अनिश्चितता की जो स्थिति लगातार बनी हुई थी वह भी समाप्त हो गई एवं हरीश रावत की सरकार ने एक बार फिर से संवैधानिक ढंग से काम करने की शुरुआत कर दी है। अब यह सही वक्त है कि पूरे घटनाक्रम का

निष्पक्ष विश्लेषण किया जाए और इस क्रम में उठे संवैधानिक मुद्दों पर चर्चा प्रारंभ की जाए। इस विवाद के राजनीतिक पक्ष से इस पत्र का कोई लेना-देना नहीं है और न ही इस घटनाक्रम से किस पार्टी को फायदा हुआ या किस पार्टी को नुकसान हुआ, हमें इससे कोई मतलब है। इस घटनाक्रम से उठने वाली कुछ संवैधानिक जिज्ञासाओं पर विचार जरूर आवश्यक है।

पूरे घटनाक्रम पर नजर डालें तो 18 मार्च, 2016 को उत्तराखंड विधानसभा में बजट पारित करते समय सदन में मतदान के क्रम में अध्यक्ष ने ध्वनिमत से बजट के पारित होने की घोषणा की, परंतु भाजपा के सदस्यों के साथ कांग्रेस के भी 9 विधायकों के द्वारा मतदान कराने की प्रक्रिया की मांग की गई। राज्यपाल के पॉल से मुलाकात कर कांग्रेस के 9 बागी सदस्यों ने भाजपा के सदस्यों के साथ मिलकर इस निर्णय के विरुद्ध हरीश रावत सरकार के अल्पमत में आ जाने का दावा किया और राज्यपाल ने तत्काल 28 मार्च तक रावत सरकार को विधानसभा में बहुमत सिद्ध करने का निर्देश दिया। इस बीच उत्तराखंड विधानसभा के अध्यक्ष द्वारा कांग्रेस के 9 बागी सदस्यों की सदस्यता समाप्त कर दी गई। 28 मार्च को सदन में शक्ति परीक्षण के एक दिन पहले यानी 27 मार्च को ही केंद्र द्वारा राज्य में राष्ट्रपति शासन लगा दिया गया। केंद्र सरकार के इस फैसले के विरुद्ध हरीश रावत ने उत्तराखंड उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया जिसके द्वारा पुनः 31 मार्च को शक्ति परीक्षण की तारीख निश्चित की गई और इसमें निलंबित विधायकों को भी भाग लेने का निर्देश दिया गया। इसके विरुद्ध पुनः उत्तराखंड उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच के द्वारा शक्ति परीक्षण को स्थगित कर दिया गया और केस की सुनवाई भी स्थगित कर दी गई। इस क्रम में उच्च न्यायालय ने पुनः 21 अप्रैल को बहुमत सिद्ध करने का निर्देश दिया। उच्च न्यायालय के इस आदेश के विरुद्ध केंद्र सरकार द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील की गई। इस पर उच्चतम न्यायालय ने पुनः प्रदेश में राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया। तत्पश्चात उच्चतम न्यायालय के निर्देश पर 10 मई को दो घंटे के लिए राष्ट्रपति शासन हटाकर विधानसभा में शक्ति परीक्षण की तिथि निर्धारित की गई। यह भी निर्देश दिया गया कि विधानसभा में विश्वासमत पर होने वाली मतदान की प्रक्रिया राज्य सरकार के अधिकारी प्रधान सचिव, विधायी एवं संसदीय कार्य विभाग उत्तराखंड की देखरेख में होगी। मतदान का नतीजा उक्त पदाधिकारी द्वारा गोपनीय ढंग से उच्चतम न्यायालय को भेजा जाएगा। उच्चतम न्यायालय के आदेश का पालन हुआ एवं इसी तरीके से शक्ति परीक्षण की प्रक्रिया पूरी हुई। इसमें हरीश रावत सरकार ने विश्वासमत हासिल कर लिया और इसके फलस्वरूप अब उत्तराखंड में निर्वाचित सरकार संवैधानिक ढंग से पुनः कार्यरत हो गई है।

अब इस पूरे घटनाक्रम से उपजे कुछ संवैधानिक प्रश्नों के प्रति जिज्ञासा अवश्य बढ़ गई है। सबसे महत्वपूर्ण घटना विधानसभा की कार्यवाही (विश्वास प्रस्ताव पर मतदान) की निगरानी के लिए राज्य सरकार के किसी पदाधिकारी की नियुक्ति तथा मतदान के नतीजे को बंद लिफाफे में सुप्रीम कोर्ट में प्रस्तुत करने की थी। इससे कई संवैधानिक प्रश्न पैदा होते हैं। इस संदर्भ में संविधान के अनुच्छेद 212

का अवलोकन प्रासंगिक है। इस धारा के खंड एक में कहा गया है कि 'राज्य के विधानमंडल की किसी कार्यवाही की विधिमान्यता को प्रक्रिया की किसी कथित अनियमितता के आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा'। इसी अनुच्छेद के खंड 2 में स्पष्ट प्रावधान है कि राज्य के विधानमंडल के किसी अधिकारी या सदस्य को प्रक्रिया या कार्य संचालन के विनियमन के लिए जो शक्तियां प्राप्त हैं उनके प्रयोग के संदर्भ में वह किसी न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के अधीन नहीं होगा। स्पष्ट है कि संविधान के अनुसार विधानमंडल की प्रक्रिया तथा कार्य संचालन का विनियमन किसी न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के अधीन नहीं है। इस अनुच्छेद के परिप्रेक्ष्य में उत्तराखंड की घटनाओं के विश्लेषण से प्रतीत होता है कि विधानसभा के संचालन को अविश्वास के घरे में लेते हुए राज्य सरकार के किसी पदाधिकारी (जो सामान्य रूप से सदन में प्रवेश के भी हकदार नहीं हैं) की निगरानी के अधीन कर दिया गया। इस तरह से उत्तराखंड विधानसभा में विश्वास मत पर हुए मतदान के दौरान जो प्रक्रिया अपनाई गई उससे अनुच्छेद 212 के तहत संविधान प्रदत्त अधिकारिता, मर्यादा या साख स्पष्ट रूप से प्रभावित हुई है। हम सभी जानते हैं कि संविधान में 10वीं अनुसूची के जुड़ जाने और दल-बदल निरोधक विधेयक पारित हो जाने के बाद विधानसभा या किसी विधायिका में गोपनीय मतदान की प्रासंगिकता ही समाप्त हो गई है। विधानसभा की कार्यवाही के तहत होने वाले सभी मतदान खुले तरीके से लोगों के सामने होते हैं और उसमें कुछ भी गोपनीय नहीं होता है। विधानसभा की कार्यवाही की अमूमन वीडियो रिकार्डिंग भी की जाती है तथा इसकी कार्यवाही मीडिया के लिए भी खुली रहती है। तब प्रश्न उठता है कि अगर विधानसभा के अध्यक्ष ने मतदान कराने की मांग ठुकरा दी तो इसके निराकरण के लिए सक्षम न्यायालय द्वारा विधानसभा में पक्ष-विपक्ष के विभाजन या किसी अन्य तरीके से मतदान कराने का निर्देश दिया जा सकता था। इस पूरी प्रक्रिया का सीधा प्रसारण कर मीडिया और आम जनता के समक्ष पक्ष-विपक्ष के विभाजन की पारदर्शिता सुनिश्चित की जा सकती थी। लेकिन यह नहीं करके किसी सरकारी अधिकारी की देखरेख में विधानसभा की कार्यवाही संचालित करना कहां तक न्यायसंगत है। दूसरे, अगर न्यायालय उचित समझता तो राज्य के महाधिवक्ता को भी इसके लिए नियुक्त किया जा सकता था। महाधिवक्ता को भी छोड़कर किसी प्रशासनिक अधिकारी के अधीन विधानसभा की कार्यवाही संचालित कराना संवैधानिक परंपराओं के अनुकूल नहीं जान पड़ता है। एक बात साफ है कि पूरे घटनाक्रम से विधायिका की मर्यादा एवं अधिकारिता का अकारण हनन हुआ है। अतः उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में आपसे आग्रह है कि पूरे देश के पीठासीन पदाधिकारियों की एक अत्यावश्यक बैठक बुलाई जाए जिसमें इस मुद्दे पर गंभीर विमर्श किया जा सके।

[उत्तराखंड में शक्ति परीक्षण के तौर-तरीकों पर सवाल खड़े कर रहे हैं बिहार विस के अध्यक्ष विजय कुमार चौधरी, पत्र का संपादित अंश]

THE ECONOMIC TIMES

Date: 31-05-16

Making loss-making PSEs subsidiary of their profitable peers not a good idea for reform

Making a loss-making public enterprise the subsidiary of a profit-making one is not the way to go about public sector reform. The recent move to make loss-making Hindustan Steelworks Construction Ltd (HSCL) a subsidiary of profitable NBCC (India) Ltd is an example of taking up a good idea and twisting it out of shape.

Any failed enterprise must be shut down and its assets redeployed in production.

The S K Roongta committee had proposed takeover of sick PSUs by financially strong ones to achieve such redeployment.

Using the balance-sheet strength of well-run PSUs to prolong the life of a failed enterprise or to service its loans, as seems to be intent behind the move with ONGC and the Gujarat state enterprise GSPC that lost a fortune on flawed gasfield development, is to waste resources rather than to redeploy resources locked up in corporate zombies.

Of the 235 operational CPSEs, 77 incurred a net loss of about Rs 27,360 crore in 2014-15.

Rightly, the S K Roongta panel, set up by the UPA, had recommended the sale of loss-making central public sector enterprises (CPSEs), through an auction, limited to other CPSEs.

Enabling profit-making CPSEs to bid would help create new businesses and leveraging on the infrastructure of the loss-making CPSE. Selecting the highest bidder and setting up public sector land development authority, modelled on the rail land development authority, also make sense.

Unlocking the value of land and other assets will enable a profitable PSU to invest in new projects, badly needed for the economy to grow. Sell loss-making CPSEs lock, stock and barrel to CPSEs with huge reserves.

The Centre will get some funds, the acquiring PSE will get valuable land (most PSEs sit on prime land), pay off staff and end the misery of the living corporate dead.

Date: 31-05-16

India should act firmly to end attacks on Africans

India's society and government have to address the problem that underlies the intermittent attacks on Africans living in India. The malaise simmers below the surface and breaks out once in a while in ugly pustules that then embarrass ministers and ambassadors. It cannot be wished away but must be confronted. The problem essentially has three dimensions: identity politics, racism and the seeming impunity of vigilantism. The three interact with and reinforce one another.

When one individual of African origin does something wrong, other Africans entirely unrelated to the incident or person involved in the incident, get blamed and attacked. This stems from long-entrenched group identities that have riven Indian society for centuries and are yet to be subsumed in a grand, national identity.

Politicians keep promoting identity politics, based on caste, religious community, language, ethnicity and region, often to the point of violent conflict, to mobilise support.

The net result is for people to stay trapped in an 'us versus them' mentality, which is readily tapped by all kinds of miscreants to pounce on the perceived 'other'. Such mob justice, too, is the result of a culture of vigilantism tolerated, if not actively patronised, by identity politics.

Under the present government, presumed beefeaters and traders have been attacked by mobs, with the highest of the land refusing to express disapproval of such violence, offering only sorrow for the victims. Such vigilantism and identity politics go against the basic grain of democracy and India has to put an end to these for its own sake, not just to save face outside the country.

Racism, too, is a problem. Indians are acculturated to valorise fair as lovely and disdain dark, although some heroes and heroines of the epics are described as dark.

The ideologies of caste and colonialism converge to posit the white Aryan as superior and the dark-skinned toilers of the land as impure. India needs not just firm law-and-order action but also cultural cleansing to remove the prejudices that harm Indians as well as Africans living here.


Date: 30-05-16

Enter the superbug?

Alarm bells have been sounded after a woman in the U.S. was detected with bacteria resistant to a last-resort antibiotic. The 49-year-old was carrying *E. coli* bearing a new gene, *mcr-1*, which is resistant to even colistin, the last available antibiotic that works against strains that have acquired protection against all other medication. This is the first reported case of the *mcr-1* gene in an *E. coli* strain found in a person living in America, but it raises worries about how far it may have spread. The results of *mcr-1* gene identification were published recently in the journal *Antimicrobial Agents and Chemotherapy*. Though resistance to colistin has been detected for about 10 years in several countries, the danger from this has been somewhat played down since such resistance was brought about by gene mutations that cannot spread easily between bacteria. But *mcr-1* poses a threat of an entirely different order; in this case a small piece of DNA (plasmid) found outside the chromosome carries a gene responsible for antibiotic resistance. Since the gene is found outside the chromosome, it can spread easily among different types of bacteria, as well as among patients. In the case of *E. coli*, the colistin resistance is not insurmountable as it is still treatable by other known drugs. But were the gene to spread to bugs treatable by only last-resort antibiotics, we could be facing the dreaded — and indeed, long-anticipated — superbug. Thus, the discovery of *mcr-1* in more countries and settings increases the chances of the emergence and spread of resistance against

all available antibiotics. It could well lead to an era without effective drugs to treat bacterial infections — the post-antibiotic age, as it were.

The mcr-1 gene was first identified in China in November 2015, following which there were similar reports from Europe and Canada. The unchecked use of antibiotics in livestock is a major reason for the development of drug resistance. Indeed, given the widespread use of colistin in animals, the connection to the drug-resistant mcr-1 gene appears quite clear. A November 2015 paper in The Lancet noted that a significantly higher proportion of mcr-1 positive samples was found in animals compared with humans, suggesting that the mcr-1 gene had emerged in animals before spreading to humans. Besides being administered for veterinary purposes, colistin is used in agriculture. The global community needs to urgently address the indiscriminate use of antibiotics in an actionable manner, and fast-track research on the next generation of drugs.



THE TIMES OF INDIA

Date: 31-05-16

Cut out middlemen: Modi is right in backing technology to choke corruption in welfare benefits

Prime Minister Narendra Modi's call for Middleman Mukta Bharat resonates, for a simple reason. All political parties see themselves as 'pro-poor' and plough enormous funds into social welfare schemes. However, the bulk of those funds are siphoned off by middlemen. Almost three decades after then Prime Minister Rajiv

Gandhi famously argued that only 17 paise of every rupee spent on the poor actually reaches them, the ghost of corruption and inefficiency still hangs over the sarkari system of social welfare.

However, the overlapping potential of technology and the universalisation of banking – through the trinity of Jan Dhan, Aadhaar and Mobile technology (JAM) – now makes it possible to eliminate middlemen from the delivery of welfare schemes. Any political party that succeeds in doing this while in government will transform India's democracy and win the gratitude of the electorate for a long time to come.

Social welfare schemes have always been a boon for middlemen who have exploited various loopholes to profiteer. The system of delivering welfare such as food grains at highly discounted price has provided incentives for large scale pilferage. Ghost beneficiaries are one symptom of this flawed approach. Building on Direct Benefits Transfer initiated by its predecessor, NDA has managed to weed out 3.5 crore bogus beneficiaries saving over Rs 21,000 crore under the LPG Pahal scheme in 2015 and 2016. The use of Aadhaar in Public Distribution System (PDS) by states like Delhi, Andhra Pradesh, Telangana and Puducherry has already yielded results with Rs 10,000 crore as savings in the kitty. As many as 1.6 crore bogus ration cards were culled from the list of beneficiaries. UPA's flagship programme – MGNREGA – too has managed to save Rs 3,000 crore in 2015.

The drive to loosen the hold of middlemen needs to extend to other areas. Millions of small farmers are in the grip of middlemen linked to agricultural mandis or markets. Eliminating the monopoly of agricultural mandis on sale of farm produce will introduce competition and help farmers get a better deal. If NDA wants to make good its promise of doubling farmers' income, it should free them from the clutches of middlemen. Today, it is possible to directly transfer cash or food coupons to poor households. The time is ripe for the country to move away from the traditional mai baap sarkar towards a vibrant social democracy that thrives on innovation.
